فروری ۲۰۱۱ء

ماہنامہ شعاع عمل لکھنؤ

قَالَ اللّٰہُ تَبَارَکَ وَتَعَالیٰ قَدْ جَاءَ کُمْ مِنَ اللّٰہِ نُورٌ وَکِتَابٌ مُبِیْنٌ

بے شک تمہارے پاس اللہ کی طرف سے نور آیا ہے اور روشن کتاب





نورہدایت فاؤنڈیشن، حسینیۂ غفرانمآب، چوک، لکھنؤ۔۳

R.N.I. No. UPBIL/2004/13526
Postel Regd.No. SSP/LW/NP-75/2008-10 Dispatch Date: 2 & 6 of Every Month

SHUA-E-AMAL
Lucknow

शुआ-ए-अमल
हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका लखनऊ

FEBRUARY 2011





NOOR-E-HIDAYAT FOUNDATION
Imambara Ghufran Maab, Chowk, Lucknow-3 (U.P.) INDIA, Ph.:0522-2252230

बिस्मेही तआला

जिल्द 7 — शुमारा 8

नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन की

इस्लामी, इल्मी और तहक़ीक़ी
हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका

फरवरी–2011

शुआ–ए–अमल

"लखनऊ"

केयामे इदारा

15 जमादिलऊला 1424 हि० / 16 जुलाई 2003 ई०

इजरा–ए–रिसाला

15 जमादिलऊला 1425 हि० / जुलाई 2004 ई०

मिलने का पता

नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन

इमामबाड़ा हज़रत ग़ुफ़रानमआब, मौलाना कल्बे हुसैन रोड, चौक, लखनऊ – 3

Phone No: 0522-2252230 — 0522-4062731 Mobile No: 09335276180 — 09335996808

सै. कल्बे जवाद नक़वी प्रिन्टर, पब्लिशर और प्रोपराइटर ने मासिक शुआ–ए–अमल (उर्दू, हिन्दी) निज़ामी आफ़सेट प्रेस विक्टोरिया स्ट्रीट लखनऊ से छपवाकर आफ़िस नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन इमामबाड़ा ग़ुफ़रानमआब मौलाना कल्बे हुसैन रोड लखनऊ–3 से प्रकाशित किया। सम्पादक : सै० मुस्तफ़ा हुसैन नक़वी 'असीफ़ जाएसी'।

Per copy 20/-   Annual 200/-



R.N.I. No.
UPBIL/2004/13526



Postal Regd. No.
SSP/LW/NP-75/2008-10



WEBSITE:
www.noorehidayatfoundation.com
www.al-ijtihaad.com



E_mail:
noorehidayat@yahoo.com
noorehidayat@gmail.com

ज़रे सालाना

1- यूरोप, अमरीका, कनाडाः
80 अमरीकी डालर
2- ख़लीजी मुमालिकः
60 अमरीकी डालर
3- एशिया, पाकिस्तानः
40 अमरीकी डालर
4- पाकिस्तान ज़मीनी डाकः
20 अमरीकी डालर

लाइफ़ मेम्बरशिपः 4000/-

फ़ेहरिस्ते मज़ामीन

फ़रवरी 2011ई०
सफ़रुल मुज़फ़्फ़र 1432हि० रबीउल अव्वल 1432हि०

हज़रत इमाम जाफ़रे सादिक़ अ० ने फ़रमायाः-

(जान लो) जन्नत पर नागवारी और सब्र का पहरा है, जिस शख़्स ने दुनिया में नागवारियों पर सब्र किया वह जन्नत में दाख़िल हो जाएगा, और जहन्नम पर ख़ुशियों और हैवानी चाहतों का पहरा है चुनानचे जो शख़्स भी लज़्ज़तों और चाहतों के पीछे गया तो वह जहन्नम में दाख़िल हो जाएगा।

रसूल (स0) का फ़रमान

अल्लामा सै० मुहम्मद रज़ी साहब क़िब्ला, कराची
हिन्दी रूपः डॉ आरिफ़ अब्बास

क़ुरआनी तालीमात और क़ुरआनी निज़ामे ज़िंदगी की बुनियाद जिस वाहिद नज़रिये पर है वह सिर्फ़ हक़ीक़त पसंदी है। इन तालीमात का रुख़ न शख़्सियत परस्ती की तरफ़ है और न ख़ित्ते और क़ौम परस्ती की तरफ़, न उनका ताल्लुक़ किसी ख़ास नस्ल से है और न ख़ास रंग व ज़बान से। उनका हक़ीक़ी मक़सद यही है कि बनी नौए इंसान को अल्लाह ने जिस ग़रज़ के लिए पैदा किया है वह पूरी हो और इंसान इसी कामिल तरीन निज़ाम के मुताबिक़ ज़िंदगी गुज़ारे जो अल्लाह ने उसके लिए मुक़र्रर व मुअय्यन कर दिया है बुनियादी तौर पर क़ुरआनी तालीमात का ख़िताबे समाज के हर फ़र्द से है और इस ख़िताब में अमीर व ग़रीब, हाकिम व महकूम, आज़ाद और ग़ुलाम, शाहो गदा सब ही एक सफ़ में नज़र आते हैं।

हज़रत रिसालतमआब[स०] ने एक मौक़े पर फ़रमाया था कि बनी इस्राईल की तबाही व बर्बादी का एक बड़ा सबब ये था कि वह शरई अहकाम को नाफ़िज़ करने में मुजरिम की शख़्सियत को सामने रखते थे। यानी अगर कोई ग़रीब व मुफ़लिस और छोटा आदमी कोई जुर्म करता था तो उसको सज़ा देते थे लेकिन अगर वैसा ही जुर्म कोई बड़ा आदमी करता था तो उस से कोई पूछताछ नहीं की जाती थी इसलिए मेरी उम्मत को हमेशा इस तरह की तफ़रीक़ से बचना चाहिए। हुज़ूरे अनवर[स०] की पूरी पाक ज़िन्दगी इस क़ुरआनी उसूल का नमून-ए-कामिल थी। आपने किसी मौक़े पर भी इलाही अहकाम नाफ़िज़ करने में तबक़ाती क़िस्म का शक तक नहीं पैदा होने दिया और अपनी सीरत से इस बात को साबित कर दिया कि इस्लाम की सारी की सारी तालीमात की बुनियाद सिर्फ़ हक़ीक़त पसन्दी पर क़ायम है और इसके अलावा कोई दूसरा रुख़ और रुजहान उनमें नहीं पाया जाता। क़ुरआने हकीम में कसीर मक़ामात पर इसी हक़ीक़त पसन्दी की तरफ़ इशारा फ़रमाया गया है। सूर-ए-बक़रा में अल्लाह का इरशाद हैः यानी ''नेकी इसका नाम नहीं है कि तुम इबादत के वक़्त मश्रिक़ और मग़रिब की तरफ़ अपने चेहरे कर लिया करो'' और फिर फ़रमाया है असल में नेकी तो उस शख़्स की है जो अल्लाह पर सच्चे दिल से ईमान लाए। इसी तरह क़यामत के दिन पर, फ़रिश्तों, अल्लाह की किताबों और उसके पैग़म्बरों पर ईमान लाए और अपना माल अल्लाह की मुहब्बत में क़राबतदारों, यतीमों, मोहताजों, परेशान हाल मुसाफ़िरों और आम ज़रूरतमन्द सवाल करने वालों को दे और लोगों की गर्दनें छुड़ाने में ख़र्च करे, नमाज़ पाबन्दी से पढ़ा करे, ज़कात बाक़ायदा अदा किया करे और ये लोग जब कोई अहद करें तो उसे पूरा करें और फ़क़्रो फ़ाक़ा और तकलीफ़ व बीमारी में सब्र से काम लें और जब कभी जेहाद का मौक़ा आए तो उसमें में इस्लाम के दुश्मनों के मुक़ाबले में साबित क़दम रहें। ऐसे ही लोग सच्चे मोमिन हैं और यही मुत्तक़ी और परहेज़गार हैं। इस आयत में बनी नौए बशर के लिए एतेक़ादी और अमली हैसियत से एक ऐसे निज़ामे ज़िन्दगी की तालीम दी गई है जो उसके वुजूद के हर-हर जुज़ पर हावी है। उसको लाखों तरह की परस्तिशों से बचा लिया गया जिसमें उसकी हलाकत व तबाही के सारे ही अस्बाब जमा थे और सिर्फ़ अकेले अल्लाह की इबादत का हुक्म दिया गया कि उसी में उसकी फ़लाह व नजात पोशीदा है

शेष....... पेज 11 पर

इस्लाम और इंसानी हुक़ूक़

क़ाएदे मिल्लत मौलाना सै० कल्बे जवाद नक़वी, जनरल सेक्रेट्री मजलिस उलमा-ए-हिन्द
अनुवादः डॉ० आरिफ़ अब्बास

(1)

मग़रिबी दुनिया ने बड़ी आबो ताब के साथ ये प्रोपेगण्डा कर रखा है कि इंसानी हुक़ूक़ के मूजिद, मुबल्लिग़ और मुहाफ़िज़ मग़रिबी मुफ़क्किरीन (Western Intellectuals) रहे हैं मगर हक़ीक़त ये है कि इलाही दीनों ख़ास तौर से हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा^{स०} की शरीअत में इंसानी हुक़ूक़ का बेहद लेहाज़ रखा गया है और इंसानी हुक़ूक़ के मुबल्लिग़ और मुहाफ़िज़ हमेशा से अम्बिया और रसूल और मज़हबी रहबर ही रहे हैं मगर अफ़सोस की बात यह है कि इस हक़ीक़त को छुपाने में भी बड़ी कोशिशें की गईं।

असल में पहली और दूसरी जंगे अज़ीम के बाद इंसानी हुक़ूक़ की तरफ़ ध्यान बहुत ज़्यादा बढ़ गया, क्योंकि इन दोनों जंगों के दौरान ज़ुल्मो सितम, दहशत और बरबरियत अपनी बलंदी पर पहुँच चुकी थी और इंसानों को कीड़ों-मकोड़ों की तरह मार दिया गया था, इसलिए इंसानी हुक़ूक़ की वज़ाहत और उनकी हिफ़ाज़त की सख़्त ज़रूरत महसूस की गई। अगरचे काफ़ी ज़माने से इंसानी हुक़ूक गुफ़्तगू का मौज़ू रहे हैं, जैसे कि 1688ई० में ब्रिटेन की पार्लिमान में इंसानी हुक़ूक़ का एक क़ानून मंज़ूर हुआ। उसी तरह से अमरीका में भी 1776ई० में इंसानी हुक़ूक़ का बिल मंज़ूर किया गया, मगर बात सिर्फ़ काग़ज़ तक महदूद रही। आज यूरोप वाले फ़ख़्र कर रहे हैं कि उन्होंने अक़वामे मुत्तहेदा में 1948ई० में इंसानी हुक़ूक़ का मंशूर मंज़ूर करवाया और दुनिया के सताए हुए और मज़लूम इंसानों को एक अज़ीम तोहफ़ा दिया। यक़ीनन यूरोप वालों के लिए मंशूरे इंसानी हुक़ूक़ एक नई और फ़ख़्र वाली बात हो सकती है, क्योंकि यूरोप की तारीख़ मर्दों और औरतों पर ज़ुल्मो सितम से भरी हुई है। जवान औरतों को जादूगरनी होने के बहाने से पादरियों के ज़रिए ज़िंदा जलवा दिया गया और पता नहीं कितने उलमा और साइंसदानों को ईसाई अक़ीदों और मुसल्लमात की मुख़ालिफ़त की सज़ा में फ़ांसी पर चढ़ा दिया गया। वहाँ न तो इंसानों को बहैसियते इंसान कोई इज़्ज़त हासिल थी और न औरत की शराफ़त और इस्मत की कोई क़ीमत थी और न आज़ादी के सही मफ़हूम से कोई वाक़िफ़ था। ऐसे समाज में इंसानी हुक़ूक़ के लिए आवाज़ उठाना और इंसानियत की हिफ़ाज़त की बात करना यक़ीनन ख़ुद उनके लिए फ़ख़्र की वजह है, मगर मुसलमानों के लिए ये तमाम बातें नई नहीं हैं, क्योंकि इस्लाम चौदह सौ साल पहले ही ये सारे हुक़ूक़ उन से कहीं बेहतर अंदाज़ में इंसानी दुनिया को अता कर चुका है, बल्कि ये कहना मुबालग़ा न होगा कि मग़रिबी मुफ़क्किरीन ने इंसानी हुक़ूक़ का तसव्वुर इस्लाम ही से लिया है, क्योंकि स्पेन में मुसलमानों के क़ब्ज़े के बाद यूरोप तक सारे उलूम मुसलमानों ही के ज़रिए पहुँचे हैं। अगरचे ईसाई तारीख़ लिखने वाले इस हक़ीक़त पर पर्दा डालने के भरपूर कोशिश करते रहे हैं।

इंसानी हुक़ूक़ पर बात करने से पहले इस हक़ीक़त को मानना बहुत ज़रूरी है कि इंसान की अक़्ल हर काम की मस्लहेत, ख़राबी, नुक़सान और फ़ायदे मुकम्मल तरीक़े से नहीं समझ सकती है। अगर इंसानी अक़्ल काफ़ी होती तो अम्बिया और रसूलों के आने की

ज़रूरत न थी। दूसरी हक़ीक़त ये है कि इस्लाम में तशरीअ् मुताबिक़े तकवीन है, यानी इस्लामी अहकाम मुताबिक़े फ़ितरत हैं और इस्लामी शरीअत इंसान की फ़ितरत और तबीअत पर मबनी है और इंसान के फ़ितरी तक़ाज़ों को वही समझ सकता है, जो ख़ालिक़े फ़ितरत है और तीसरा काम जो इस्लामी अहकाम के सिलसिले में हमेशा सामने रहना चाहिए कि इंसान का असली हदफ़ और वाक़ई मंज़िल आख़िरत है। इंसान पैदा ही हुआ है आख़िरत के लिए, इसलिए इस्लाम का कोई भी हुक्म ऐसा नहीं है कि जिसमें दुनिया के साथ-साथ आख़िरत सामने न हो, इसलिए बहुत से इस्लामी अहकाम की मस्लेहत हम इंसान समझने से मजबूर हैं और उख़रवी मस्लेहत का इल्म सिर्फ़ और सिर्फ़ हमारा ख़ालिक़ रखता है और ये हमारी अकेली अक़्ल से ऊपर है। दुनिया की ज़िंदगी सिर्फ़ मुक़द्दमा है, आख़िरत की हमेशा की ज़िंदगी का। अक़वामे मुत्तहेदा के मंशूर में सारे हुक़ूक़ का महवर इंसान बहैसियते इंसान है। एक ऐसा इंसान जिसका अपने ख़ालिक़ से कोई ताल्लुक़ नहीं। इस्लाम ने जो हुक़ूक़ अता किए हैं, उनमें सिर्फ़ इंसान ही नहीं है, बल्कि अपने ख़ालिक़ का बन्दा भी है, इसलिए अक़वामे मुत्तहेदा के मंशूर हुक़ूक़े इंसानी में दर्ज इंसान, जो ख़ुदा से लाताल्लुक़ भी है और जिसकी ज़िंदगी, हुक़ूक़ और ज़िम्मेदारियाँ सिर्फ़ इस दुनिया तक घिरी हुई हैं, उस इंसाने इस्लामी से बुनियादी फ़र्क़ रखता है, जो अल्लाह का मानने वाला भी है और जिसके सामने आख़िरत की हमेशा की ज़िंदगी भी है।

मैंने अर्ज़ किया कि अक़वामे मुत्तहेदा के मंशूर में महवरो मरकज़ इंसान है और इस्लाम में भी सारे 'अहकाम' का महवर व मौज़ू इंसान ही है। इस्लाम की नज़र में इंसान ख़ुद ही लायक़े ताज़ीम और तकरीम है। ज़मीन के ऊपर उसकी हैसियत अल्लाह के ख़लीफ़ा की सी है। 'जब तुम्हारे रब ने फ़रिश्तों से कहा कि मैं ज़मीन के ऊपर अपना जानशीन बनाने वाला हूँ' (सूरए बक़रा, आयतः 30) इंसान की पैदाइश के मौक़े पर सारे फ़रिश्तों को सजदा करने का हुक्म दिया गया। 'जब हमने फ़रिश्तों को हुक्म दिया कि आदम को सजदा करो' (सूरए बक़रा, आयतः 34) पूरी काएनात और सारी मख़लूक़ात को उसके लिए लगा दिया। 'क्या तुम लोगों ने नहीं देखा कि अल्लाह ने ज़मीन और आसमान की तमाम चीज़ों को तुम्हारे लिए बनाया है और तुम्हारे लिए सारी ज़ाहिरी और बातिनी नेमतों को मुकम्मल कर दिया है।' इंसान की पैदाईश के बाद ख़ुद अपने को अल्लाह तआला ने अहसनुल ख़ालिक़ीन का लक़ब दिया। 'फ़तबारकल्लाहु अहसनुल ख़ालिक़ीन' (सूरए मोमिनून, आयत, 14)

इंसान ज़मीन पर इलाही नुमाइंदा है और उसके सिफ़ात और कमालात का मज़हर है। हक़ का इज़हार, अद्लो इंसाफ का क़याम, रहमत और मुहब्बत को आम करना इसके फ़राएज़ में दाख़िल है। क़ुरआन मजीद तमाम इंसानों को चाहे वह मर्द हों या औरत, इंसानियत और ज़ात के लेहाज़ से एक समझता है। इंसान की आज़ादी उसके हुक़ूक़ और उसकी इज़्ज़त का पासो लेहाज़ है, रंग, नस्ल और ज़बान वग़ैरा इस्लाम की नज़र में नाक़ाबिले एतेबार हैं और इज़्ज़त का मेयार सिर्फ़ तक़वा क़रार दिया है। इस्लाम ने इसी नज़रिये के तहत इंसान के लिए हुक़ूक़ और फ़राएज़ मुतअय्यन किये हैं। थोड़ी सी तहक़ीक़ के बाद ये हक़ीक़त रौशन और खुल जाती है कि अक़वामे मुत्तहेदा के मंशूर हुक़ूक़े इंसानी में जो कुछ भी दर्ज है, तक़रीबन वह तमाम उमूर इस्लामी निज़ाम में पहले ही से पूरी तरह मौजूद हैं। इंसान के तमाम फ़ितरी और तबीई हुक़ूक़ जैसे ज़िंदगी का हक़, करामत व इज़्ज़त का हक़, तालीम व तरबियत का हक़, आज़ादी का हक़, मसावात का हक़, औरतों के हक़ वग़ैरा तमाम बुनियादी हुक़ूक़ इस्लाम की तवज्जो का मरकज़ हैं। इस तरह से इत्मिनान से कहा जा सकता है कि जितने भी उसूल अक़वामे मुत्तहेदा के मंशूर 1948ई० में दर्ज हैं, वह सब सीधे तौर पर इस्लाम से मुतास्सिर होकर तरतीब दिए गए हैं और उनका सरचश्मा इलाही दीन है। इस्लाम अक़वामे मुत्तहेदा के वुजूद से सैकड़ों साल पहले ही इंसानियत को सारे हुक़ूक़ अता कर चुका है।

(बशुक्रिया रोज़नामा राष्ट्रीय सहारा (उर्दू) 22 अक्टूबर 2010ई०)

(2)

इससे पहले के मज़मून में अर्ज़ किया गया कि अक़वामे मुत्तहेदा के मंशूर हुक़ूक़े बशर में मरकज़ी नुक़ता और मेहवर इंसान की ज़ाती इज़्ज़त, शराफ़त व करामत है जिसको मंशूर में विरासती वक़ार (Inherent diginity) से याद किया गया है। इंसान के इसी ज़ाती इज़्ज़त व करामत के ख़याल ने, जो मौजूदा ज़माने में भी नुमायाँ तौर पर उभर कर सामने आया है, इंसान के दरमियान आदिलाना रिश्तों और उनके हुक़ूक़ के एहतेराम में बुनियादी किरदार अदा किया है। इसी की बुनियाद पर पूरा मंशूर तश्कील दिया गया और सारी दुनिया में अम्नो सुल्ह का माहौल क़ायम करने और इंसानी हुक़ूक़ के एहतेराम की अपील की गई है।

इंसान की ज़ाती इज़्ज़त और शराफ़त को इलाही दीनों ख़ासकर इस्लाम में अहम मक़ाम हासिल है। अक़वामे मुत्तहेदा के वुजूद से बहुत पहले इस्लाम एलान कर चुका है कि इंसान ज़ाती तौर पर इज़्ज़त और एहतेराम का मुस्तहक़ है, तर्जुमाः ''हम ने आदम की औलाद को इज़्ज़त अता की'' (सूरए असरा, आयतः 70) मगर जिस तरह अक़वामे मुत्तहेदा के 'इंसान' और इस्लाम के 'इंसान' में फ़र्क़ है (जैसा कि पिछले मज़मून में बयान हो चुका है) उसी तरह से अक़वामे मुत्तहेदा और इस्लाम के दरमियान इंसानी करामत के ख़याल में भी फ़र्क़ है। अक़वामे मुत्तहेदा के मंशूर में इंसानी इज़्ज़त और शराफ़त साबित व जामिद है, मगर इस्लाम में ज़ाती तौर पर ताज़ीम व तकरीम का मुस्तहक़ इंसान अपने गुनाहों और नाफ़रमानियों की बदौलत इस इज़्ज़त को खोकर अपने को जानवरों से भी नीचा बना लेता है। तर्जुमाः ''वह जानवरों जैसे हैं, बल्कि उनसे भी पस्त'' (सूरए आराफ़, आयत-179) और यही इंसान अपने तक़्वे, नेक आमाल और इलाही इताअत के ज़रिए इज़्ज़त के आला तरीन मरतबों पर पहुँच सकता है। तर्जुमाः ''अल्लाह के यहाँ तुम में से ज़्यादा इज़्ज़त वाला वह है जो ज़्यादा तक़्वे वाला है'' (सूरए हुजरात, आयतः 13) यही वजह है कि क़ुरआन मजीद में इंसान की बेअंदाज़ा तारीफ़ और मदह है। कभी एलान होता है, ''हम ने उनको बेहतरीन बनावट पर पैदा किया'' (सूरए तीन, आयतः 3) कभी अल्लाह तआला इंसान को पैदा करके अपने को अहसनुल ख़ालिक़ीन के लक़ब से नवाज़ता है। (सूरए मोमिनून, आयतः 14) इसी इंसान को ख़ुदा के ख़लीफ़ा की हैसियत से पेश किया जाता है और फ़रिश्तों पर बरतरी अता की जाती है। (सूरए बक़रा, आयतः 23) ये इंसान मसजूदे मलाएका क़रार पाता है (सूरए बक़रा, आयतः 23) और काएनात को उसके सारे ख़ज़ानों के साथ, उसके लिए मुसख़्ख़र कर दिया जाता है (सूरए इनआम, आयतः 141) मगर इसी के उलट क़ुरआन मजीद में सबसे ज़्यादा मज़म्मत उसी इंसान ही की है। कहीं इरशाद है, तर्जुमाः ''ये बेइंतहा सितमगर और नादान है।'' (सूरए अहज़ाब, आयतः 21) कहीं फ़रमाया, तर्जुमाः ''अपने परवरदिगार के लिए इंतेहाई नाशुकरा है''। (सूरए हज, आयतः 22) कहीं एलान हुआ, तर्जुमाः ''वह बहुत जल्दी करने वाला, बाग़ी, मख़लूक़ात में सबसे ज़्यादा झगड़ालू, तंग नज़र और कंजूस है। यहाँ पर मसला थोड़ा उलझ जाता है और ज़हन में ये सवाल उभरता है कि क्या इंसान अच्छाई और बुराई से मिलकर बना है जो एक ही वक़्त में उसकी तारीफ़ भी है और बुराई भी? क्या इसकी फ़ितरत में नूर और ज़ुल्मत आपस में मिली है कि जो एक ही वक़्त में तारीफ़ भी है और बुराई भी? हक़ीक़त ये है कि इंसान की कभी तारीफ़ और कभी मज़म्मत इस सबब से नहीं है कि इंसान का माद्दा ख़ैर और शर से मिलकर बना है, बल्कि क़ुरआन मजीद इस हक़ीक़त को समझाना चाहता है कि हम ने तमाम क़ुव्वतें इंसान के अंदर पोशीदा कर दी हैं और उसको इख़्तियार दे दिया है कि उनका इस्तेमाल सही या ग़लत अपनी मर्ज़ी से करे। दूसरे लफ़्ज़ों में क़ुदरत ने इंसान को मुख़्तलिफ़ सिफ़ात और कमालात की सूरत में बेशुमार रंग मुहैय्या कर दिए ताकि वह अपने किरदार की तस्वीर ख़ुद बनाए, इंसान अपना ख़ुद नक़्क़ाश भी है और ख़ुद अपना ही मेमार भी। जब अल्लाह की दी हुई क़ुव्वतों का सही रास्ते में इस्तेमाल करेगा तो फ़रिश्तों को पीछे छोड़ देगा और अगर इन्हीं क़ुव्वतों का ग़लत इस्तेमाल करेगा तो

जानवरों से भी पस्त हो जाएगा। रिवायतों और सीरते पाक मुहम्मद[स०] व आले मुहम्मद[अ०] में भी करामत और इंसानी शराफ़त के सिलसिले में सख़्त ताकीद मिलती है। पैग़म्बरे इस्लाम[स०] ने मिना के मैदान में अपने मशहूर ख़ुतबे में इरशाद फ़रमाया, "ऐ लोगो! आगाह हो जाओ कि तुम्हारा परवरदिगार एक है, तुम्हारा बाप एक है, न अरब को अजम पर बड़ाई हासिल है, न अजम को अरब पर, न गोरों को कालों पर और न कालों को गोरों पर बरतरी हासिल है। बुनियाद सिर्फ़ तक़्वा है।" (तफ़सीरुल मीज़ान, जिल्द-18 पेज-334) पूरा कलामे रिसालत अक़्वामे मुत्तहेदा के मंशूर में मौजूद इंसान की (Inherent Diginity) का बेहतरीन मुरक़्क़ा है। मौला अली[अ०] ने अपने एक ख़ुतबे में इसी हक़ीक़त की तशरीह करते हुए फ़रमाया है, "ऐ लोगो! हज़रत आदम[अ०] न किसी ग़ुलाम को दुनिया में लाए थे और न किसी कनीज़ को। तमाम इंसान आज़ाद हैं। हाँ मगर बाज़ की ज़िम्मेदारियाँ बाज़ पर ज़रूर डाली गई हैं।" (किताबुल वाफ़ी, जिल्द-14 पेज-530) हज़रत अली[अ०] ने अपने गवर्नर मालिक अशतर के नाम ख़त में इस तरह हिदायत फ़रमाई है "मेहरबानी, हुस्ने सुलूक और रहम के जज़्बे को अपनी रईयत के लिए अपने दिल में जगह दो... क्योंकि अवाम दो गिरोह हैं। या दीन में तुम्हारे भाई हैं या ख़िलक़त में तुम्हारी तरह हैं" (नह्जुल बलाग़ह, ख़त-53) इस्लाम में ख़िलक़त में यकसानियत के जज़्बे पर बहुत ताकीद है। अपने अफ़आल व आमाल में मुसलमानों को इस यकसानियत के पहलू की रिआयत का हुक्म दिया गया है। मशहूर सहाबी जाबिर बिन अब्दुल्लाह अंसारी[रज़ि०] से रिवायत है "एक जनाज़ा ले जाया जा रहा था। रसूल[स०] जनाज़े के एहतेराम में खड़े हो गए। हम लोगों ने रसूल[स०] की ख़िदमत में अर्ज़ किया ऐ अल्लाह के रसूल ये यहूदी का जनाज़ा है। रसूल[स०] ने फ़रमाया जब किसी जनाज़े को देखो तो उसके एहतेराम में खड़े हो जाओ और क्या यहूदी एक इंसान नहीं है? (सही बुख़ारी, जिल्द-1 पेज-228) हज़रत अली[अ०] एक जगह से गुज़र रहे थे देखा एक बूढ़ा आदमी भीक माँग रहा है, आपने पूछा ये कौन है, जवाब दिया गया एक ईसाई है, मौला अली[अ०] ने फ़रमाया जब इसमें ताक़त थी, तुमने इस से काम लिया और अब इसे बेसहारा छोड़ दिया। हुक्म दिया इसका सारा ख़र्च बैतुलमाल से अदा किया जाए।" (वसाएलुश्शीआ, जिल्द-11 पेज-49) हज़रत अली ख़िलाफ़त की कुर्सी पर तशरीफ़ फ़रमा हैं, किसी ने ख़बर दी कि एक यहूदी ख़ातून के पैरों की छागल, गले का हार और उसके बुंदे किसी मुसलमान ने ज़बरदस्ती छीन लिए, मौला अली ने इरशाद फ़रमाया ऐसे वाक़िआत के रद्देअमल में अगर कोई मुसलमान अपनी जान भी कुर्बान कर दे तो वह क़ाबिले मलामत नहीं है, बल्कि ऐसा वाक़िआ होने से बेहतर है कि मुसलमान अपनी जान दे दे। (नह्जुल बलाग़ह, ख़ुतबाः 27) अपने एक ख़त में तहरीर फ़रमाया, "हरगिज़ किसी के ग़ुलाम न बनो, जबकि अल्लाह ने तुम्हें आज़ाद पैदा किया है। (नह्जुल बलाग़ह, ख़त-31 फ़िक़रा-34)

(बशुक्रिया रोज़नामा राष्ट्रीय सहारा (उर्दू) 19 नवम्बर 2010[ई०])

(3)

10 दिसम्बर 1948 को अन्जुमने अक़्वामे मुत्तहेदा के तारीख़ी इजलास में तालियों की ज़बरदस्त गड़गड़ाहट में हुक़ूक़े इंसानी का मंशूर मंज़ूर हुआ जिस पर आज तक मग़रिबी दुनिया फ़ख़्र कर रही है। मंशूर एक मुख़्तसर से मुक़द्दमे और 30 दफ़आत (आरटिकिल्स) पर मुश्तमिल है। मग़रिब का दावा है कि हम ने इस मंशूर के ज़रिए कमज़ोर, मज़लूम और सितम रसीदा इंसानों के हुक़ूक़ को महफ़ूज़ कर दिया है और इंसानों के आपसी रिश्तों, उख़ुव्वत और मसावात को हमेशा के लिए मज़बूत कर दिया है, लेकिन पढ़ने वालों को मालूम है कि आज तक इस मंशूर पर अमल नहीं हो सका है। आज भी ताक़तवर कमज़ोरों का इस्तेहसाल कर रहे हैं, ताक़तवर कमज़ोरों को पीस रहे हैं और जंगल राज का दौर-दौरा है। अन्जुमने मुत्तहेदा आज तक न किसी मज़लूम को उसका हक़ दिलवा सकी है और न अभी तक किसी ज़ालिम को सज़ा दिलवा सकी है। इसका एक बुनियादी सबब ये है कि मंशूर में मख़्लूक़ के हुक़ूक़ का ज़िक्र है मगर ख़ालिक़ के हुक़ूक़ का कहीं तज़किरा नहीं। कोई मख़्लूक़ उस वक़्त तक सही मानों में दूसरी

मख़लूक़ का हक़ अदा करने के लायक़ नहीं हो सकती जब तक अपने ख़ालिक़ के हुक़ूक़ अदा करने के लिए तैयार न हो। इस्लाम में हुक़ूक़े बशर का निज़ाम, अल्लाह तआला और उसकी तरफ़ से नाज़िल की हुई शरीअत में मुकम्मल यक़ीन और मुस्तहकम ईमान की बुनियादों पर है। जो इंसान अल्लाह तआला को अपना ख़ालिक़, रब, माबूद और शरीअत के क़ानून बनाने वाला मानता है उसके हुक़ूक़ की मारफ़त भी रखता है और जहाँ तक हो सके इन हुक़ूक़ की रिआयत भी करता है और साथ ही साथ उनकी हिफ़ाज़त के लिए ताक़त भर कोशिश भी करता है, ऐसा ही इंसान दूसरे बंदगाने ख़ुदा के हुक़ूक़ को समझ भी सकता है और उनकी रिआयत भी कर सकता है, क्योंकि ऐसा इंसान ये मज़बूत अक़ीदा रखता है कि अल्लाह तआला इंसान का पैदा करने वाला है, सारे इंसान उसी एक अल्लाह की मख़लूक़ हैं इसलिए सबके हुक़ूक़ बराबर हैं और उनकी अदायगी हर इंसान पर वाजिब व लाज़िम है। यही अक़ीद-ए-वहदते इंसानी की बुनियाद बना है। क्योंकि अल्लाह पर अक़ीदा रखने वाला जानता है कि रंग व नस्ल, क़ौमियत व जिंसियत सिर्फ़ पहचान के वसीले हैं और इन चीज़ों का रुतबा और मक़ाम से कोई ताल्लुक़ नहीं। अगर दुनिया में हुक़ूक़े बशर को मनवाना है और भाईचारे और बराबरी का परचम वाक़िअन बलन्द रखना है तो अल्लाह पर ईमान रखना होगा। इस्लाम की तस्दीक़ करना होगी, तौहीद पर तकिया हो, इस्लामी शरीअत पर एतेमाद हो तब कहीं जाकर हुक़ूक़े बशर की रिआयत हो सकती है और ख़ुदा के बंदों के दरमियान बराबरी क़ायम हो सकती है।

अब तक की जितनी भी बातचीत थी, वह अक़वामे मुत्तहेदा के मंशूर में दर्ज आर्टिकिल एक और दो से मुताल्लिक़ थी, जिनमें इंसानी बराबरी का ज़िक्र है। हम ने साबित किया कि ये बराबरी इस्लाम ने कहीं बेहतर तरीक़े से बहुत पहले अता कर दी है। क़ुरआन मजीद में बतौर कुल्ली हयात की इलाही रहमत से ताबीर किया गया है। ''अल्लाह की रहमत के आसार को देखो कि किस तरह से उसने मुर्दा ज़मीन को दोबारा ज़िंदा किया।'' (सूरए रूम, आयतः 50) इसी तरह क़ुरआन मजीद में एक जगह पर इंसानी ज़िंदगी को ऐसी रूह के एक जुज़ से तश्बीह दी है ''जबकि मैंने मिट्टी से आदम का पुतला तैयार किया और उसमें अपनी रूह का एक हिस्सा फूँका'' (सूरए हुजरात, आयतः 15) इस तरह से हयात, इलाही रहमत के बराबर है। इस रुख़ से जहाँ ज़िंदगी की अहमियत का पता चलता है, वहाँ ये हक़ीक़त भी आशकार होती है कि ज़िंदगी असल में अल्लाह की एक अमानत है जो हमें अता की गई है और हम उसके अमीन हैं। हमें अपनी ज़िंदगी पर सिर्फ़ उतना ही इख़्तियार है कि जितना ज़िंदगी बख़्शने वाले ने हमें अता किया है। इस्लामी फ़िक़्ह में 'नफ़्से मोहतरमा' का बहुत बढ़चढ़ कर के तज़किरा है और हर इंसान की जान क़ाबिले एहतेराम है। क़ुरआन मजीद में 'नफ़्से मोहतरमा' के उनवान के तहत हर इंसान की जान शामिल है, चाहे वह मुसलमान हो, चाहे न हो। अल्लाह की किताब क़ुरआन मजीद में इंसानी जान का इतना एहतेराम है कि मंशूर हुक़ूक़े इंसानी को तरतीब देने वाले उनका तसव्वुर भी नहीं कर सकते। क़ुरआन मजीद में एक इंसान के क़त्ल को सारी इंसानियत के क़त्ल के बराबर क़रार दिया गया है। अगर कोई भी किसी को बग़ैर क़िसास और ज़मीन पर फ़साद फैलाने के जुर्म के अलावा बेगुनाह क़त्ल करे तो गोया उसने सारी इंसानियत को क़त्ल कर दिया और अगर किसी एक इंसान की जान बचाई तो गोया उसने पूरी इंसानियत को ज़िंदगी बख़्श दी। (सूरए माएदा, आयतः 33) शिया मसलक की बहुत ही अहम किताब वसाएलुश्शीआ में नफ़्से मोहतरमा (क़ाबिले एहतेराम इंसानी ज़िंदगी) के सिलसिले में 14 अहादीस मौजूद हैं। इस्लामी क़ानून के तहत किसी के क़त्ल में मदद, बेतवज्जोही, बेइत्तेफ़ाक़ी, यहाँ तक कि किसी क़ातिल को पनाह देना भी हराम है। हज़रत अली[अ०] की ख़िदमत में पेश होने वाले मुक़द्दमों में एक मुक़द्दमा तारीख़ में दर्ज है कि किसी शख़्स का क़त्ल हो गया, क़ातिल पकड़ा गया। हज़रत अली[अ०] ने पूछा कि क्या क़त्ल के वक़्त कोई ऐसा शख़्स मौजूद था जो क़ातिल को रोक सकता था और मक़तूल की जान बचा

सकता था। मालूम हुआ कि एक गुलाम वहाँ मौजूद था जो इतनी ताक़त रखता था कि क़ातिल को रोक सके और मक़तूल की जान बचा सके, मगर वह देखता रहा और क़त्ल होता रहा उसने कोई बीच-बचाव नहीं किया। हज़रत अली[अ०] ने हुक्म फ़रमाया कि क़ातिल से क़िसास लिया जाएगा और उस शख़्स की आँखें निकाली जाएंगी जो देखता रहा, मगर मक़तूल को बचाया नहीं। (बहवाल-ए-हुकूमते अली[अ०], नाज़िम ज़ादा चाप ईरान)

क्योंकि ज़िंदगी अल्लाह की अमानत है और बन्दा उतना ही इख़्तियार रखता है, जितना ख़ालिक़ ने अता किया है, इसलिए ख़ुदकशी हराम है, क्योंकि इंसान अमीन है और ख़ुदकशी अमानत में ख़यानत है। ख़ुदकशी के सिलसिले में दिलचस्प पहलू ये है कि ये अकेला जुर्म है जिसमें नाकाम रहने पर सज़ा है, कामयाब हो जाने पर कोई सज़ा नहीं। अगर मुजरिम जुर्म में कामयाब हो जाय तो फिर दुनिया का कोई क़ानून उसे सज़ा नहीं दे सकता। यहीं से दुनियावी क़ानून की मजबूरी और इस्लामी क़ानून की मज़बूती का अन्दाज़ा होता है। इस्लाम में जुर्म की असली सज़ा आख़िरत में मिलेगी। ख़ुदकशी में कामयाबी की सज़ा दुनिया का क़ानून नहीं दे सकता सिर्फ़ आख़िरत ही में ऐसे मुजरिम को सज़ा मिल सकती है।

(बशुक्रिया रोज़नामा राष्ट्रीय सहारा (उर्दू) 3 दिसम्बर 2010[ई०])

(4)

इस्लाम पर सख़्त तरीन एतेराज़ है कि वह आज़ादी मज़हब और अक़ीदे का मुख़ालिफ़ है। इस्लामी ममलकत में किसी काफ़िर या मुश्रिक का वुजूद नाक़ाबिले बर्दाश्त है और कुरआनी हुक्म है कि ज़मीन पर कुफ़्र और शिर्क को ज़ोर ज़बरदस्ती से उखाड़ फेंको और किसी काफ़िर या मुश्रिक को जहाँ पाओ क़त्ल कर दो। क़दीम उलमा में बाज़ हज़रात तहमीले अक़ीदा के क़ायल थे और उनकी दलीलें नीचे दी गई हैं (1) इस्लाम यानी जन्नत और अबदी हयात और कुफ़्र व शिर्क यानी जहन्नम और अबदी हलाकत, क्योंकि कुरआन मजीद का फ़रमान है "जिसने दीने इस्लाम के अलावा कोई दीन इख़्तियार किया तो वह हरगिज़ कुबूल नहीं किया जाएगा और ऐसा शख़्स आख़िरत में घाटा उठाएगा।" (सूरए आले इमरान, आयतः 85) इसलिए मुसलमानों का फ़रीज़ा है कि अगर कोई अपनी मर्ज़ी से इस्लाम इख़्तियार न करे तो ज़बरदस्ती उसे मुसलमान बनाया जाए, कयोंकि ये ज़बरदस्ती उसकी भलाई के लिए है, ताकि वह जहन्नम से नजात पाए और जन्नत का हक़दार बन हो जाए। (2) अगर मुसलमान ख़िलाफ़े इस्लाम अक़ीदों को ज़बरदस्ती न मिटाएं तो वह इंसानी समाज में रवाज पा जाएंगे और उनके मानने वाले बढ़ जाएंगे जिससे सीधे-सादे मोमिनीन भी उनके साथ हो जाएंगे, इसलिए ऐसे मुमकिना ख़तरे से बचने के लिए शिर्क व कुफ़्र को जड़ से उखाड़ फेंकना चाहिए और गुमराह करने वाले अक़ीदों के फैलाने वालों को भी ख़त्म कर देना चाहिए ताकि सीधे-सादे मुसलमान उनके शर से महफ़ूज़ रहें। (3) इंसानों की एक बड़ी तादाद नफ़्स परस्त और हवा व हवस की क़ैदी है। नफ़्स परस्ती के सबब बेहतरीन दलीलें भी असरअंदाज़ नहीं होती हैं और हवस परस्ती की वजह बाज़ लोग मज़हब की बेहतरीन तालीमात के बावजूद ग़लत अक़ीदों की तरफ़ क़ायल हो जाते हैं, इसलिए ऐसे लोगों के ख़िलाफ़ ताक़त का इस्तेमाल ज़रूरी है। (4) अक़ीद-ए-तौहीद इंसान का बुनियादी हक़ है, इसलिए उस इंसानी हक़ का बचाव भी इंसानी हुक़ूक़ में दाख़िल है और बचाव में ज़ोर-ज़बरदस्ती का इस्तेमाल करना पड़े तो हरगिज़ क़ाबिले एतेराज़ नहीं है।

उलमा की अक्सरियत ने इन दलीलों को पसंद नहीं किया है और दलीलों के मुख़ालिफ़ों का नज़रिया है कि ईमाने वाक़ई का ताल्लुक़ दिल से है और ईमान के लिए ख़ुलूस और मज़बूत इरादे शर्त हैं। चन्द जुमलों को ज़बान से अदा कर देने से कोई मोमिन नहीं बन जाता जब तक कि एतेक़ाद न हो। दीन का मक़सद ईमाने वाक़ई है न कि ईमाने ज़ाहिरी। ईमाने वाक़ई और एतेक़ादे क़ल्बी ज़ोर व ज़बरदस्ती से हासिल नहीं हो सकता। ज़बरदस्ती के नतीजे में निफ़ाक़ और दिखावा तो हो सकता है जो कुफ़्र और शिर्क से बदतर है। इस तरह ज़बरदस्ती मोमिन बनाने से मोमिन और मुनाफ़िक़ की पहचान मुश्किल हो जाएगी और जो ग़रज़ है कि जन्नत

के हक़दार बन जाते वही हासिल न हो पाएगी, क्योंकि जन्नत असली मोमिनीनो के लिए है मुनाफ़िक़ों के लिए नहीं। क़ुरआन मजीद की बहुत सी आयतें इसी नज़रिये की ताईद करती हैं और आयते करीमा ''ला इक्राहा फ़िद्दीन क़द तबैय्यनर रुश्दा मिनल ग़ैय्यि'' इस सिलसिले की बुनियादी हक़ीक़त रखती है। तर्जुमाः ''दीन में किसी तरह की ज़बरदस्ती नहीं है, जबकि हिदायत गुमराही से ज़ाहिर हो चुकी है।'' (सूरए बक़रा, आयतः 256) असल में दीन में ज़बरदस्ती मुमकिन ही नहीं है, क्योंकि दीन का ताल्लुक़ दिल से है। इसी तरह इस्लाम में जितनी भी इबादतें हैं उनमें नियत शर्त है और नियत दिल में होती है जो देखी नहीं जा सकती। जब तक नियत न हो नमाज़ नहीं हो सकती। रोज़े के लिए नियत शर्त, बग़ैर नियत के रोज़ा नहीं हो सकता, बग़ैर नियत के हज नहीं हो सकता। ज़ाहिरी अमल तो ज़बरदस्ती अंजाम दिलवाया जा सकता है, मगर ज़बरदस्ती नियत नहीं करवाई जा सकती, दूसरे लफ़्ज़ों में ज़बरदस्ती से उठाबैठी तो करवाई जा सकती है, ज़बरदस्ती नमाज़ नहीं पढ़वाई जा सकती। ज़बरदस्ती फ़ाक़ा तो करवाया जा सकता है रोज़ा नहीं रखवाया जा सकता। ज़बरदस्ती मक्का मुकर्रमा के सफ़र पर तो भेजा जा सकता है, हज नहीं करवाया जा सकता है। दूसरे लफ़्ज़ों में ज़बरदस्ती मुनाफ़िक़ तो बनवाया जा सकता है मोमिन नहीं। एक जगह पर क़ुरआन करीम में इरशाद है, तजुर्माः हमने उसको अच्छी और बुरी दोनों राहें दिखला दीं।'' (सूरए बलद, आयतः 10) एक जगह एलान हो रहा है ''सच्ची बात तुम्हारे रब की तरफ़ से नाज़िल हो चुकी है बस जो चाहे माने और जो चाहे न माने।'' (सूरए कहफ़, आयतः 29) यानी चुनाव में इंसान को आज़ाद छोड़ दिया है कि अपने इख़्तियार और इरादे सेसही या ग़लत चुने। यहाँ तक कि इंसानों की तक़दीर को भी उसके आमाल से जोड़ दिया, ''अल्लाह किसी क़ौम की हालत उस वक़्त तक नहीं बदलता जब तक वह ख़ुद न बदले।'' (सूरए अनफ़ाल, आयतः 53) इस तरह आज़ादी और इख़्तियार को इंसान की ख़िलक़त की बुनियाद क़रार दिया गया है, ''बस हम ने बुराईयाँ और अच्छाईयाँ उसे इलहाम कर दीं'' (सूरए शम्स, आयतः 8) अगर अल्लाह चाहता तो सब हिदायत पाने वाले हो जाते।

''अगर तेरा अल्लाह चाहता तो जितने लोग ज़मीन पर हैं वह सब के सब ईमान ले आते। तो क्या तुम लोगों पर ज़बरदस्ती करना चाहते हो कि सब के सब ईमान वाले हो जाएं।'' (सूरए यूनुस, आयतः 99) इन सारी आयतों से इस हक़ीक़त का अच्छी तरह अंदाज़ा हो जाता है कि अल्लाह तआला की मर्ज़ी यही है कि इंसान इख़्तियार और इरादे वाला रहे और आज़ादी व इख़्तियार देना इलाही सुन्नत है। मज़कूरा बाला आख़िरी आयत के सिलसिले में अब्बासी ख़लीफ़ा मामून रशीद ने हज़रत इमाम रिज़ा[अ०] से सवाल किया तो इमाम रिज़ा ने अपने दादा हज़रत अली[अ०] के हवाले से नक़ल किया कि कुछ मुसलमानों ने रसूले अकरम[स०] से कहा कि आप लोगों को इस्लाम क़ुबूल करने पर मजबूर करें तो हमारी तादाद में इज़ाफ़ा हो और क़ुदरत व ताक़त में भी। रसूले अकरम[स०] ने जवाब में फ़रमाया कि मैं नहीं चाहता कि ऐसी बिदअत अंजाम देने के बाद अल्लाह से मुलाक़ात करूँ कि जिस बात का अल्लाह ने हुक्म नहीं दिया है और मैं सख़्ती करने वालों में से नहीं हूँ। इस बातचीत के बाद ये आयते करीमा नाज़िल हुई। इस तरह से आयते करीमा 'ला इकराहा फ़िद्दीन'' की शाने नुज़ूल के सिलसिले में अल्लामा जलालुद्दीन सुयूती ने अपनी तफ़सीर ''दुर्रे मंसूर'' में तहरीर फ़रमाया है कि अंसार में से एक शख़्स अबू हसीन था, जिसके दो बेटे थे। शाम के मुल्क से एक ज़ैतून बेचने वाला आया करता था, उसने किसी तरह से उन दोनों को ईसाई मज़हब की तरफ़ राग़िब कर लिया और अपने साथ शाम (सीरिया) लेता गया। अबू हसीन ने सारा माजरा रसूले अकरम[स०] से बयान किया और चाहा कि उसके बेटों को ज़बरदस्ती वापस लाया जाए तो उस वक़्त ये आयत नाज़िल हुई ''दीन में कोई ज़बरदस्ती नहीं है''।

अगर क़ुरआन मजीद की सिर्फ़ एक आयत को पेश कर दिया जाए तो मैं समझता हूँ कि मुख़ालिफ़ों के एतेराज़ों का सारा क़िला तोड़ देने के लिए काफ़ी है। ''(ऐ रसूल[स०]) अगर मुश्रिकों में कोई तुम से पनाह मांगे

तो उसको पनाह दो यहाँ तक कि वह अल्लाह का कलाम सुन ले फिर उसे उसकी अमन की जगह वापस पहुँचा दो।" (सूरए तौबा, आयतः 6) आयते करीमा बहुत से नुक्तों पर रौशनी डालती है (1) तहक़ीक़ का रास्ता हर एक के लिए खुला हुआ है। कोई भी शख़्स किसी भी अक़ीदे का क्यों न हो, अगर तहक़ीक़ का शौक़ीन है तो उसे आज़ादी के साथ जुस्तजू के लिए मौक़ा देना मुसलमान की ज़िम्मेदारी है। (2) तहक़ीक़ के बीच उसे पूरी आज़ादी के साथ पूरी हिफ़ाज़त की ज़िम्मेदारी भी मुसलमानो की है, उसे कोई चोट न पहुँचे और अम्न वाला माहौल फ़राहम किया जाए। (3) तहक़ीक़ के बाद तहक़ीक़ का नतीजा जो भी हो, किसी मुसलमान को हक़ नहीं कि उस मुश्रिक पर अपना नज़रिया ज़बरदस्ती थोपने की कोशिश करे। (4) उस मुश्रिक की दलीलें इंतेहाई सब्र और सुकून से सुनी जाएं और मुसलमान इस्लाम की हक़्क़ानियत की दलीलें उसके सामने पेश करें और उसे पूरा मौक़ा दिया जाए कि पूरी पहचान के बाद वह हक़ को क़ुबूल करे और अपनी मर्ज़ी और इरादे से बातिल को छोड़े। (5) जब वह कह दे कि मेरी तहक़ीक़ पूरी हो गई है तो उसके बाद मुसलमानों को तहक़ीक़ का नतीजा पूछने का इख़्तियार नहीं है, बल्कि पहले उसे ऐसी जगह पहुँचाया जाए, जहाँ उसे अमन का पूरा यक़ीन हो ताकि वह वहाँ अपने अक़ीदे का आज़ादी से इज़हार कर सके। एतेराज़ करने वालों के सारे एतेराज़ एक तरफ़ ये आयते करीमा एक तरफ़। ये आयते करीमा क्या है? मौला अली[अ०] की ज़ुलफ़िक़ार है जो दुश्मनों के सारे हमलों को अकेले ख़त्म करने के लिए काफ़ी है। (बशुक्रिया रोज़नामा राष्ट्रीय सहारा (उर्दू) 31 दिसम्बर 2010[ई०])

शेष... रसूल[स०] का फ़रमान

इसलिए कि इंसान की नजात और फ़लाह ग़ैरुल्लाह के बनाए हुए नाक़िस निज़ाम में मुमकिन नहीं हो सकती और अगर हो सकती है तो सिर्फ़ इलाही निज़ाम पर अमल करने में। क़ुरआने हकीम ने हमें बताया है कि इंसान का असली हाकिम और मालिक और ख़ालिक़ व राज़िक़ सिर्फ़ अल्लाह है और उसी के हुक्म पर चलने में उसकी नजात है।

इक़्तेसादी पहलू के साथ ही इस आयत में इंसान के अमली शोबे के लिए कुछ बुनियादी उसूल बताए गए हैं। ग़रज़ इंसानी अक़दार की हिफ़ाज़त और इंसान के इन्फ़ेरादी और इज्तेमाई हुक़ूक़ और ज़िम्मेदारियों का जिस तरह इस्लाम ने सबक़ दिया है उसकी कोई दूसरी मिसाल नहीं मिलती।

हयाते इंसानी के इन दो पहलुओं से मुताल्लिक़ क़ुरआने हकीम ने जो इन्तेहाई मज़बूत निज़ाम हमें बताया है वह ज़मान व मकान की हदबन्दियों से आगे और आफ़ाक़ी है और क़यामत तक इसमें कोई तबदीली नहीं की जा सकती। ये अज़ीम निज़ाम क़ुरआने हकीम की सूरत में हमें रमज़ान ही के मुबारक महीने में दिया गया है जिसका हर दिन बरकतों और रहमतों का ख़ज़ाना है, ख़ासकर इसके आख़िरी जुमे यानी जुमतुल विदाअ की फ़ज़ीलत की तो इन्तेहा ही नहीं है। मुबारक हैं वह अल्लाह के ख़ास बन्दे जो इस अज़ीम दिन की बरकतों से महरूम न रहें।

नए ईसवी साल की आमद

जनाब शकील हसन शमसी साहब "राष्ट्रीय सहारा" देहली

इन दिनों हिन्दुस्तान भर में नये साल का जश्न मनाए जाने की तैयारियाँ शबाब पर हैं। बड़ी-बड़ी तिजारती कम्पनियों की तरफ़ से इस दिन को बढ़ावा दिये जाने की वजह से नये साल का जश्न अब हिन्दुस्तान के शहरी इलाक़ों का सबसे बड़ा क़ौमी त्योहार बन गया है। अमीर ग़रीब सब ही एक दूसरे को नये साल की मुबारकबाद देने में आगे बढ़ने की कोशिश करते हैं और एक दूसरे को गिफ़्ट भेजकर ख़ुश होते हैं। जब कि ये त्योहार सिर्फ़ ईसाईयों का त्योहार था, लेकिन अब इसमें सब ही मज़हब के लोग शामिल हो गए हैं। सब बिना किसी मज़हबो मिल्लत की तफ़रीक़ के 31 दिसम्बर और पहली जनवरी की दरमियानी रात में नये साल का जश्न मनाते हैं। पटाख़े छोड़ते हैं, डांस करते हैं, प्यार-मुहब्बत में मशग़ूल होते हैं और मुख़्तलिफ़ तरह की बेहयाईयाँ दिखाने को ऊँची सोसाइटी का एक हिस्सा समझते हैं। जबकि किसी को नहीं मालूम होता कि वह नया साल क्यों मना रहे हैं? क्या हो गया इस रात में जो सारे लोग दीवाने हुए जा रहे हैं? न तो मौसम बदला न दिन रात? तो फिर जश्न किस बात का? किसी को ये नहीं मालूम होता कि कलीसाओं में आज ख़ास दुआओं की तक़रीब क्यों हो रही हैं? किसी को नहीं पता कि चर्च में रात के 12 बजे घण्टे क्यों बज रहे हैं? नया साल ईसाईयों का है, लेकिन ईसाईयों से ज़्यादा ख़ुशी मनाने वालों में हिन्दू, मुसलमान, सिख, जैन और बौद्ध समाज के लोग शामिल होते हैं। सब इस दिन को एक सेकोलरिज़्म की निशानी समझकर अपनी क़िस्मत का लेखा-जोखा पढ़ते हैं। साल भर के लिए पेशीनगोईयों का एक सिलसिला शुरु हो जाता है, नये साल के स्टार क्या कहते हैं, इस पर पूरे-पूरे कालम सियाह हो जाते हैं। कई मशहूर नुजूमी साल भर की पेशीनगोईयों पर ख़ुसीसी किताबें भी पेश करते हैं (जो साल के आख़िर में पढ़ी जाएं तो मालूम पड़ता है कि उनके अंदाज़े कितने झूटे साबित हुए)।

ईसाई राहिबों की ये बहुत बड़ी कामयाबी रही है कि उन्होंने अपनी मज़हबी तक़रीबात पर सेकोलरिज़्म का ग़िलाफ़ इस तरह चढ़ा दिया कि आम लोग ये भी भूल गए कि जिस दिन वह ख़ुशी मना रहे हैं, उसका हिन्दुस्तानी मज़हबों या हिन्दुस्तानी समाज से कुछ लेना-देना नहीं है। अंग्रेज़ों का तरीक़ा ये रहा है कि अगर उन्होंने अपने मुक़द्दस दिन इतवार को सारे मुल्क में छुट्टी करने का रिवाज शुरु किया तो किसी को ये नहीं लगने लगा कि सण्डे से ईसाईयों को कुछ लेना-देना है (लेकिन अगर कोई जुमा को छुट्टी ले तो उसको फ़िरक़ापरस्त समझा जाएगा) इसी तरह नए साल के जश्न को भी भोले-भाले हिन्दुस्तानी यही समझने लगे कि ये एक सेकोलर जश्न है और इसका किसी फ़िरक़े से ताल्लुक़ नहीं है। असल में ये दिन रोमन बादशाहों ने क़ायम किया था और वह अपने मौसम के मुताबिक़ हर साल पहली मार्च को नए साल का जश्न मनाते थे। इस कैलेण्डर में 10 महीने होते थे, लेकिन बाद में जूलिस सीज़र ने इस कैलेण्डर में 2 महीनों का इज़ाफ़ा करके साल को बारह महीने का कर दिया, मगर रोमन लोगों ने इस सरकारी कैलेण्डर को दिल से कुबूल नहीं किया और वह मार्च में ही अपना नया साल मनाते रहे, लेकिन बाद में रोम के पादरी पोप ग्रेवरी XIII ने इसको हज़रत ईसा[अ०] की

विलादत के साथ जोड़ा तो लोगों ने इस साल को आसानी के साथ मान लिया। ईसाईयों के अक़ीदे के मुताबिक़ हज़रत ईसा[अ०] की विलादत 25 दिसम्बर को हुई थी उनकी छटी की रस्म 31 दिसम्बर को ही हुई थी, इसलिए ईसाई अक़ीदे के लोग दुनिया भर में इसको नए साल की शक्ल में मनाने पर तैयार हो गए और फिर जहाँ-जहाँ उन्होंने हमला किया और मुल्कों को तलवार के ज़ोर पर जीता, वहाँ-वहाँ उन्होंने नए साल के जश्न मनाए जाने की शुरुआत भी की। यरोश्लम में पाए जाने वाले सर्व के ख़ास पेड़ों को 25 दिसम्बर से ही सजाकर रखने की रस्म भी अंग्रेज़ों ने शुरु की। इन पेड़ों के चारो तरफ़ मुख़तलिफ़ अज़ीज़ और रिश्तेदार एक दूसरे के लिए तोहफ़े लाकर रख देते हैं, जो नए साल में ही खोले जाते हैं। हिन्दुस्तान में भी जगह-जगह आज आपको क्रिसमस ट्री सजे हुए नज़र आएंगे (क्रिसमस ट्री की शुरुआत की भी एक कहानी है, जिस पर इस मज़मून में बात करने की जगह नहीं है)।

हिन्दुस्तान में अंग्रेज़ों के आने से पहले तक कोई अंग्रेज़ी महीनों के नाम भी नहीं जानता था तो नए साल का जश्न मनाने का तो कोई सवाल ही नहीं उठता था। पुराने ज़माने में चूँकि हिन्दुस्तान मुख़तलिफ़ हिस्सों में बटा हुआ था, उसी हिसाब से यहाँ के मुख़तलिफ़ हिस्सों में अलग-अलग दिनों में नये साल का जश्न मनाया जाता था। यहाँ के कैलेण्डर को पंचाग कहा जाता था और हिन्दू कैलेण्डर का मक़बूल तरीन नाम विक्रम समवत है। ये नाम शहंशाह विक्रमादित्त ने उज्जैन पर जीत पाने के बाद दिया था। ये पंचांग हज़रत ईसा[अ०] से 50 साल पहले शुरु हुआ था। उसी ज़माने में जूलियस सीज़र ने रोम में भी अपने नये कैलेण्डर को तरतीब दिया था। हिन्दू कैलेण्डर में मौसम सूरज के हिसाब से चलते हैं, महीने चाँद के हिसाब से और रात दिन चाँद और सूरज दोनों के साथ चलते हैं। हिन्दू कैलेण्डर का पहना दिन कारतिक महीने की पहली तारीख़ को होता है। इसके अलावा अलग-अलग सूबों में मौसम के हिसाब से अलग-अलग दिनों में नया साल मनाया जाता है।

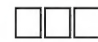
आसाम में नए साल का जश्न रंगोली बीहू के नाम से हर साल 15 मार्च को मनाया जाता है। आंध्रा प्रदेश और कर्नाटक के लोग चैत के महीने की पहली तारीख़ को अपना नया साल मनाते हैं, महाराष्ट्र वाले अपना नया साल गड़ी पड़वा भी इसी दिन मनाते हैं, तमिलनाडु के रहने वालों के लिए नया साल Puthandu होता है और ये दिन हर साल 14 अप्रैल को पड़ता है, जबकि पड़ोसी रियासत केराला में नए साल का पहला दिन Medam महीने की पहली तारीख़ को होता है, उस दिन सूरज बुर्जे असद में दाख़िल होता है। उत्तरी हिन्दुस्तान के सबसे बड़े सूबों उत्तर प्रदेश और बिहार में नए साल के पहले दिन को मकरसकरान्ती कहते हैं। ये चैत महीने की पहली तारीख़ को होता है। सिख फ़िरक़े के लोग बैसाखी को अपने नए साल का पहला दिन मानते हैं। ये दिन 13 या 14 अप्रैल को पड़ता है इसके अलावा बंगाल में भी 14 या 15 अप्रैल को नए साल का जश्न होता है। इसे अलावा भी मुख़तलिफ़ सूबों में इन ही तारीख़ों के आसपास नए साल का जश्न मनाया जाता है।

हिन्दुस्तान में जब मुग़लों को हुकूमत का मौक़ा मिला तो उन्होंने नौरोज़ की तक़रीबें मुनअक़िद कीं। नये साल की ये तक़रीबें, लेकिन हिन्दुस्तानी तारीख़ों पर नहीं थीं, बल्कि सेन्ट्रल एशिया और ईरान और अफ़ग़ानिस्तान में 21 मार्च या 20 मार्च को मनाए जाने वाले नौरोज़ के त्योहार की मुनासिबत से ही होता था। असल में इस इलाक़े के लोगों के लिए मार्च का तीसरा हफ़्ता एक बहुत बड़ी मौसमी तबदीली लाया करता था। बर्फ़ गिरना बंद होती थी और पतझड़ का दौर ख़त्म होकर बहार के मौसम की आमद-आमद होती थी। हिन्दुस्तान के बरफ़ीले इलाक़ों के लिए मौसम के हिसाब से ये जश्न तो ठीक था, लेकिन साहिली इलाक़ों या मैदानी इलाक़ों में इसकी कोई अहमियत नहीं थी, बल्कि इन्तेहाई गर्मी के दिनों की शुरुआत अप्रैल में होने की वजह से अवाम इस मौक़े पर जश्न मनाने की पोज़ीशन में नहीं थे। शायद इसीलिए पूरे हिन्दुस्तान में कभी भी एक साथ नए साल का जश्न नहीं मनाया जा सका। यहाँ आबाद पारसी और बहाई फ़िरक़े के लोग आज भी नौरोज़ का जश्न 21 मार्च को मनाते है। इसके अलावा शिया फ़िरक़े के लोग भी 21 मार्च को

नज़रो नियाज़ का प्रोग्राम करते हैं और इस बात पर अक़ीदा रखते हैं कि इसी दिन हज़रत अली[अ०] ने ख़िलाफ़त की मसनद संभाली थी, लेकिन ये रस्म चूँकि ईरानियों के यहाँ से आई थी, इसलिए नौरोज़ सिर्फ़ एक दिन की रस्म तक महदूद रहा। ईरानी महीनों के नाम तक किसी को मालूम नहीं थे, इसलिए नए साल से इसको जोड़ा नहीं जा सका मगर नौरोज़ से पहले तक आम तौर पर लखनऊ के लोग आंगन या छत पर सोते नहीं हैं, बर्फ़ के पानी का इस्तेमाल नहीं करते और यहाँ तक कि पंखे भी नहीं चलाए जाते हैं। ईरान के शम्सी कैलेण्डर के पहले महीने फ़रवरदीन के पहले दिन को नौरोज़ कहा जाता था, मगर हिन्दुस्तान में भले ही जश्ने नौरोज़ होता हो शम्सी कैलेण्डर यहाँ नहीं चल सका और यहाँ अंग्रेज़ों के आने से पहले तक सिर्फ़ विक्रम समवत और हिजरी कैलेण्डर ही चला करते थे।

आज़ादी से पहले सिंधी फ़िरक़े के लोग चेतीचंद का त्योहार बड़े ख़ुशी-ख़ुशी मनाते थे। यही उनके लिए नए साल का जश्न था, ये भी चैत के महीने का चाँद देखकर मनाया जाता था, इसलिए इसको चैतीचंद कहा जाने लगा। इसके उलट गुजरात में नया साल कारतिक शुक्ला के महीने में मनाया जाता है, लेकिन अब ये सारे कैलेण्डर, तक़वीम और नए साल के पंचाग पीछे चले गए हैं। हिन्दुस्तान के हर छोटे-बड़े शहर में नए साल का जश्न जमकर होता है, मोबाईल पर मैसेज आने का सिलसिला तो हफ़्ताभर पहले ही से शुरु हो जाता है। जो लोग नए साल का जश्न नहीं मनाते उनको बैकवर्ड और नीचा समझा जाता है, जो लोग प्यार-मुहब्बत, गाने-नाचने की महफ़िलों से अलग रहते हैं, उनको पुराने ख़यालात वाला कहा जाता है, शराब के जो दरिया बहाए जाते हैं, उनमें न डूबने वालों को समाज के साथ न चलने वाला माना जाता है, जो बदकारी में न लगे उनको पिछड़ा हुआ माना जाता है और जो पटाख़े न छुड़ाए उसे कंजूस कहा जाता है। बहरहाल अब बेहयाई के इस तूफ़ान की रोकथाम मुमकिन नहीं और नई नस्ल को उसके अज़ाबसे महफ़ूज़ रखने का भी कोई रास्ता नज़र नहीं आता। अल्लाह ही ख़ैर करे अपने हिन्दुस्तानी नौजवानों की...!

(बशुक्रिया रोज़नामा राष्ट्रीय सहारा (उर्दू) 29 दिसम्बर 2010[ई०])



इमाम जाफ़रे सादिक़[अ०] और एक प्यासा ईसाई

एक रोज़ इमाम जाफ़र सादिक़ अलैहिस्सलाम मक्के से मदीने जाने वाले पथरीले रेगिस्तान से गुज़र रहे थे आपके ग़ुलाम ''मसादिफ़'' भी आपके साथ थे रास्ते में हज़रत की नज़र एक शख़्स पर पड़ी जो अपना मुँह एक पेड़ के तने की तरफ़ किए हुए था उसकी हालत ख़िलाफ़े मामूल हो रही थी, हज़रत ने मसादिफ़ से फ़रमाया हम उस आदमी की तरफ़ चलते हैं, कहीं वह प्यासा न हो और प्यास की वजह से वह इस तरह पड़ा हुआ हो। इमाम[अ०] और मसादिफ़ दोनों उसके नज़दीक पहुँचे और उस से पूछा! प्यासे हो? उसने कहा! हाँ मसादिफ़ इमाम के हुक्म से नीचे उतरा और उस शख़्स को पानी पिलाया मगर उसके लिबास और चाल-ढाल से मालूम हुआ कि वह मुसलमान नहीं है बल्कि मसीही दीन का मानने वाला है। जब इमाम[अ०] और मसादिफ़ उस शख़्स से ज़रा आगे बढ़ गए तो मसादिफ़ ने इमाम से पूछा कि क्या ईसाई को सदक़ा देना जाएज़ है? इमाम[अ०] ने फ़रमाया, हाँ! ऐसी हालत में ज़रूरत के वक़्त।

(किताब ''इमाम जाफ़रे सादिक़[अ०] - पेश्वा व रईसे मज़हब'' अज़ हुज्जतुल इस्लाम अक़ीक़ी बख़्शाइशी, पेज-20 से)

मुख्य समाचार

इमामबाड़ा सिब्तैनाबाद के
एलाटमेंट रद्द करने की हिदायत

लखनऊ कमिश्नर का एल०डी०ए० के नाम ख़त

वक़्फ़ इमामबाड़ा सिब्तैनाबाद हज़रत गंज में रहने वाले एल०डी०ए० से एलाट किए हुए ख़ानदानों को अब इमामबाड़ा छोड़ना होगा। इस सिलसिले में लखनऊ डिवीज़न के कमिश्नर और एल०डी०ए० के साबिक़ आफिशियल चेयरमैन प्रशान्त द्विवेदी ने एक अहम फ़ैसले के तहत एल०डी०ए० के वाइस चेयरमैन को हिदायत दी है कि वह केन्द्रीय प्रोटेक्टिव यादगारी मक़बरा अमजद अली शाह के कैम्पस में रहने वाले ख़ानदानों का एलाटमेंट मंसूख़ करके पूरे कैम्पस को मोहकमए आसारे क़दीमा को सौंपने का इन्तेज़ाम करें। उन्होंने अपने ख़त में मोहकमए आसारे क़दीम लखनऊ डिवीज़न के 24 दिसम्बर को भेजे गए एक ख़त का हवाला देते हुए वी०सी०एल०डी०ए० को मुख़ातब करते हुए ख़त की एक कापी का ज़िक्र किया और कहा है कि इस ख़त की बुनियाद पर उन्होंने वी०सी० एल०डी०ए० को ख़त भेजा है। कमिश्नर ने कहा कि मक़बरा अमजद अली शाह के नाम पर ही हज़रतगंज बाज़ार मशहूर है और उसकी सजावट के दौरान इस तारीख़ी इमारत के गेट के सामने ट्रांसफ़ारमर लगा हुआ है उसको हटाने और इस इमारत के कैम्पस में रह रहे लोगों का एलाटमेंट मंसूख़ करके पूरा कैम्पस मोहकमए आसारे क़दीमा को ट्रांसफ़र कराया जाए। उन्होंने वी०सी० एल०डी०ए० से उम्मीद ज़ाहिर की कि वह इमामबाड़ा कैम्पस को नाजाएज़ क़ब्ज़ों से आज़ाद कराने और तारीख़ी इमारत के सामने ट्रांसफ़ारमर फ़ौरी तौर से हटाने के लिए ज़ाब्ते के तहत कारवाई करें और इस कारवाई की कमिश्नर को ख़बर दें। वाज़ेह हो कि 27 नवम्बर 1919 में मक़बरा अमजद अली शाह को महफ़ूज़ असासा क़रार दिया गया था।

हिज़्बुल्लाह ने लेबनान की मख़लूत हुकूमत गिरा दी

हिज़्बुल्लाह ने मख़लूत हुकूमत से अपनी हिमायत वापस लेने का फ़ैसला मौजूदा वज़ीरे आज़म साद हरीरी के वालिद रफ़ीक़ हरीरी के क़त्ल की तहक़ीक़ के लिए बनाई गई अक़वामे मुत्तहेदा के कमीशन की तरफ़ से हिज़्बुल्लाह के मेम्बरों पर इल्ज़ाम लगाने के इशारों के बाद हुआ है। रफ़ीक़ हरीरी को 2005 में क़त्ल कर दिया गया था। जब लेबनान की हुकूमत ख़त्म हो रही थी तो लेबनान के वज़ीरे आज़म साद हरीरी अमरीका के राष्ट्रपति बराक ओबामा से मुलाक़ात कर रहे थे। हिज़्बुल्लाह और उसके इत्तेहादियों की तरफ़ से वज़ीरों के इस्तीफ़े के बाद वज़ीरे आज़म साद हरीरी उस वक़्त तक निगराँ वज़ीरे आज़म के तौर पर काम करेंगे जब तक राष्ट्रपति नई हुकूमत नहीं बना लेते। लेबनान के आईन के मुताबिक़ एक तिहाई वज़ीरों के इस्तीफ़ा देने से हुकूमत गिर जाती है। शाम और सऊदी अरब ने हुकूमत को बचाने के लिए कोशिशें कीं लेकिन हिज़्बुल्लाह और उसके इत्तेहादियों ने ऐन उस वक़्त हुकूमत गिराने का एलान किया जब वज़ीरे आज़म साद हरीरी अमरीकी राष्ट्रपति से मुलाक़ात कर रहे थे।

ईरान और इराक़ के तअल्लुक़ात गहरे और मज़बूत हैं, ख़राब नहीं होंगे

ईरान-इराक़ दोस्ती गिरोह के सरबराह हश्मतुल्लाह फ़लाहत ने कहा है कि दोनों मुल्कों के तअल्लुक़ात इससे कहीं ज़्यादा गहरे और पायदार हैं जो दोनों क़ौमों के दुश्मनों के प्रोपगण्डों से ख़राब हो सकें। ग़ैर मुल्की ख़बर देने वाले इदारे के मुताबिक़ हश्मतुल्लाह फ़लाहत पेशा ने इराक़ी पार्लियामेंट के एक गिरोह से मुलाक़ात में कहा कि दोनों क़ौमों के रिश्ते बहुत पुराने हैं और उनके दरमियान बेशुमार शिरकतें पाई जाती हैं। उन्होंने कहा कि ईरान व इराक़ का इस्तेहकाम एक दूसरे से जुड़ा हुआ है।

फ़लाहत पेशा ने कहा कि इराक़ की ज़मीनी सालमियत का बचाव, क़ौमी हाकिमियत में इस्तेहकाम और इराक़ से जारेहीन का इख़राज जैसे मामले इराक़ के ताल्लुक़ से ईरान की ख़ारजा पॉलीसी में तरजीह रखते हैं। उन्होंने कहा कि बाहरी मुल्क ईरान-इराक़ में फूट डालने और इख़्तेलाफ़ात फैलाने के अलावा और कोई प्रोग्राम नहीं रखते। इराक़ी पारलिमानी वफ़्द ने भी कहा कि ईरान की मिल्लत और इराक़ की तक़दीरें जुड़ी हुई हैं। दोनों मुल्कों को अहम शख़सियतों का एक गिरोह बनाकर तअल्लुक़ात मज़बूत करने की कोशिश करनी चाहिए। इराक़ी पारलिमानी वफ़्द ने इस उम्मीद का भी इज़हार किया कि इराक़, इस्लामी जमहूरिया ईरान की मदद से बोहरानों से निकलकर अमन व इस्तेहकाम के रास्ते पर चल पड़ेगा। अल-इरक़िया गिरोह के अरकान पार्लियामेंट का गिरोह इन दिनों ईरान के दौरे पर है।

यहूदियों के हाथों बैतुलमुक़द्दस में

तारीख़ी क़ब्रिस्तान की बेहुरमती

मक़बूज़ा बैतुलमुक़द्दस में क़ाबिज़ यहूदियों के हाथों फ़िलिस्तीनियों की इमलाक को तबाह करने के साथ उनके मुर्दों की बेहुरमती का सिलसिला पहले की तरह जारी है। ख़बरों के मुताबिक़ यहूदी आबादकारों की बड़ी तादाद ने बैतुलमुक़द्दस में तारीख़ी क़ब्रिस्तान मामिनल्लाह में दाख़िल होकर कई क़ब्रों की बेहुरमती की। इस दौरान यहूदी आबादकारों ने क़ब्रिस्तान में मौजूद 20 क़ब्रों को उखाड़ डाला। मरकज़े इत्तेलाआत फ़िलिस्तीन के मुताबिक़ बैतुलमुक़द्स में मस्जिदे अक़्सा की तामीर व मरम्मत और इस्लामी मुक़द्दसात के बचाव में सरगर्म तंज़ीम अक़्सा फाउण्डेशन ने अपनी एक ताज़ा रिपोर्ट में बताया है कि यहूदी आबादकारों के मामिनल्लाह क़ब्रिस्तान पर हमलों और क़ब्रों की बेहुरमती का सिलसिला कई महीनों से जारी है। जो अब रोज़ का मामूल बन चुका है। रिपोर्ट के मुताबिक़ गुज़श्ता एक हफ़्ते से यहूदी आबादकार रोज़ाना की बुनियाद पर मामिनल्लाह क़ब्रिस्तान में दाख़िल होकर क़ब्रों की बेहुरमती करते हैं। अक़्सा फाउण्डेशन ने सहयूनी आबादकारों के हाथों होने वाली बेहुरमती पर शदीद मज़म्मत की है। तंज़ीम ने ख़बरदार किया है कि इस्राईल एक सोचे समझे मंसूबे के तहत यहूदियों को मुसलमानों के मुक़द्दसात पर हमलों का मौक़ा फ़राहम कर रहा है। पीर और मंगल के रोज़ यहूदी आबादकार पुलिस और फ़ौज की निगरानी में मामिनल्लाह क़ब्रिस्तान में दाख़िल हुए और क़ब्रों की बेहुरमती की। ख़याल रहे कि मक़बूज़ा बैतुल मुक़द्दस में मामिनल्लाह क़ाब्रिस्तान फ़िलिस्तीन का तारीख़ी क़ब्रिस्तान है जिसमें कई बड़े-बड़े नबियों और सहाबा की आरामगाहें भी मौजूद हैं लेकिन मुसलमानों के लिए मुक़द्दस जगह का दर्जा रखने वाला ये क़ब्रिस्तान यहूदियों के नापाक क़दमों के नीचे रौंदा जा रहा है।

एटमी साइंसदानों के क़त्ल में मुलव्विस सहयूनी एजेण्ट गिरफ़्तार

इस्लामी जमहूरिया ईरान की वज़ारते इंटिलीजेंस ने कहा है कि सहयूनी हुकूमत की जासूस तंज़ीम ईरान के एटमी साइंसदानों के क़त्ल में मुलव्विस है और उसके एजेंट को गिरफ़्तार कर लिया गया है। ईरानी ख़बर देने वाले इदारे के मुताबिक़ पीर को जारी वज़ारते इंटलीजेंस ने एक बयान में कहा है कि इस्लामी जमहूरी ईरान की सेक्योरिटी फ़ोर्सों ने अंथक कोशिशों से डाक्टर अली मुहम्मदी के क़ातिल को गिरफ़्तार कर लिया, जबकि बयान में ये नहीं बताया है कि उसे कहाँ गिरफ़्तार किया गया।

बयान के मुताबिक़ ईरानी इंटिलीजेंस ने ईरान में सहयूनी हुकूमत से वाबस्ता जासूसों और दहशतगर्दों का एक नेटवर्क भी तबाह कर दिया, बयान में कहा गया है कि मूसाद इंसानियत और ईरान के ख़िलाफ़ अपने बुरे मक़सद हासिल करने के लिए यूरोपी, इलाक़ाई और बाज़ हमसाया मुल्कों में मौजूद अपने अड्डों से इस्तेफ़ादा करती है और डाक्टर मसूद अली मुहम्मदी पर क़ातिलाना हमले इन ही अड्डों से डायरेक्ट किए गए थे।

ईरान का मुसाफ़िर जहाज़ हादसे में तबाह

77 लोगों की मौत

उत्तर पूर्व ईरान में एक मुसाफ़िर को ले जाने वाले जहाज़ के तबाह हो जाने से कम से कम 72 लोग हलाक और 35 ज़ख़्मी हो गए। ये वाक़िआ ख़राब मौसम की वजह से पेश आया। जिसकी ख़बर ईरानी रेडक्रीसेन्ट के ज़िम्मेदार ने दी है। महमूद मुज़फ़्फ़र ने राइटर को बताया कि ज़्यादातर जख़्मियों की हालत ख़राब है। हादसे से दोचार होने वाले जहाज़ पर 94 मुसाफ़िर और स्टाफ के बारह लोगों समेत कुल 106 लोग सवार थे। रेडक्रीसेन्ट के एक दूसरे अफ़सर हैदर हैदरी ने सरकारी ख़बर देने वाली एजेंसी इरना को बताया कि हलाक होने वालों की तादाद बढ़ने का अंदेशा है। इससे पहले ईरानी ज़राए इबलाग़ ने जहाज़ पर सवार लोगों की तादाद के बारे में मुख़्तलिफ़ ख़बरें दी थीं। कुछ अफ़सरों के मुताबिक़ जहाज़ औरोमिया में हवाई अड्डे पर उतरने से ठीक पहले तबाह हो गया था। एक अफ़सर ने बताया कि 50 मुसाफ़िरों को बचा लिया गया है। बचाव के काम में बर्फ़बारी और कोहरे की वजह से रुकावट आई। मुज़फ़्फ़र ने सरकारी टी०वी० को बताया कि हादसे से जहाज़ टुकड़े-टुकड़े हो गया था लेकिन किसी धमाके से फटा नहीं था। ईरानी क़ौमी ऐयरलाइन 'ईरान ऐयर' के तर्जुमान शाहरुख़ ने नीम सरकारी ख़बर देने वाली एजेंसी मेहर को बताया कि मुसाफ़िरों में दो बच्चे भी थे। सरकारी टेलीवीज़न के मुताबिक़ ये जहाज़ तेहरान से अरोमिया जा रहा था। साबिक़ा कुछ दहाईयों में ईरान के कई जहाज़ तबाह हुए हैं। अमरीकी पाबन्दियों की वजह से ईरान पश्चिम से नये जहाज़ और जहाज़ के पुर्जे नहीं ख़रीद पा रहा है। जुलाई 2009 में आरमीनिया के लिए उड़ने वाला एक ईरानी जहाज़ बीच हवा में तबाह हो गया था। इस हादसे में 68 लोग मारे गए थे। फ़रवरी 2003 में एक बहुत बुरे हवाई हादसे में दक्षिण पश्चिमी ईरान में एक फ़ौजी जहाज़ तबाह हुआ था जिसमें स्टाफ़ के लोगों के साथ 276 फ़ौजी मारे गए थे।